सुखदेव की सुबह

गोविंद सेन

सुखदेव की सुबह

सुखदेव सुबह पाँच बजे उठ जाते हैं। उनकी उम्र का काँटा पचास-पचपन के बीच कहीं अटका है। जब से उन्हें शुगर निकली है और डॉक्टर ने रोज घूमने की सलाह दी है, वे नियमित घूमने जाते हैं। सुबह घूमने से सकारात्मक ऊर्जा मिलती है, इससे रोग प्रतिरोधक शक्ति बढ़ती है। यदि सुबह ठीक हो जाए तो पूरा दिन ठीक हो जाता है। सुबह की इकट्ठा की गई ऊर्जा शाम तक चलती है। वे भरसक कोशिश करते हैं कि

उनके भीतर कोई नकारात्मक भाव प्रवेश न कर पाए। उदासी घुसपैठ करने न पाए। वे अपने पूरे दिन को खुश रखना चाहते हैं।

मेन रोड पर पश्चिम की ओर गुलाटी फाटा है। घूमने के लिए यह रोड सबसे बढ़िया है। इधर आवक-जावक कम है। ताजा हवा मिलती है। दोनों तरफ हरे भरे खेत हैं। कहीं मिर्ची तो कहीं गेहूँ की फसल खड़ी है। सड़क किनारे नीम, बबूल, पीपल, बरगद जैसे पेड़ खड़े हैं। हालाँकि इक्का-दुक्का कॉलोनियाँ इधर भी कटने लगी है। एक कॉलोनी शिवधाम तो बढ़िया विकसित हो रही है। पैसे वाले लोगों ने यहाँ कई प्लॉट ले रखे हैं। खुद रहना हो या नहीं, प्लॉट खरीदकर बेचने में काफी पैसा है। एक-दो साल में ही पैसा दुगुना-तिगुना हो जाता है। पूँजी से पूँजी बढ़ती है। कुछ लोगों का यह व्यवसाय हो गया है। कुछ दलाली भी करने लगे हैं। अगले साल तक ये कॉलोनियाँ कितने खेत खा चुकी होंगी, कहा नहीं जा सकता। धनी धंधेबाज लोगों ने इस उद्देश्य से कई खेत खरीद रखे हैं। यह सड़क गुलाटी गाँव की ओर जाती है। इस सड़क पर पुराना माँ चामुंडा माता का मंदिर है। हालाँकि यह रोड उनकी कॉलोनी से थोड़ा दूर है, लेकिन घूमने के लिए वे यही रोड पसंद करते हैं।

सुखदेव घूमकर लौट रहे हैं। मार्च का महीना है। तीन मार्च की सुहानी सुबह है। ठंड अभी गई नहीं है। वसंत ऋतु चल रही है। सब कुछ अच्छा लग रहा है। माँ चामुंडा देवी मंदिर के पास उत्तर में खाली मैदान है। बीती रात को यहाँ तथाकथित अखिल भारतीय कवि सम्मेलन हुआ था। मैदान में हर तरफ सामान बेतरतीब पड़ा हुआ है। कुछ मजदूर लाइटिंग और टेंट के सामान जैसे वायर, बल्ब, हेलोजन, लोहे के पाइप, कनातें आदि अवेर रहे हैं। इधर-उधर प्लास्टिक के डिस्पोजल गिलास, प्लेटें आदि के बेतरतीब ढेर बिखरे पड़े हैं। आसपास की सूनी दीवारों के तल पर पेशाब के छोटे-छोटे डबरे अभी भी मौजूद हैं। उनकी तीखी बू हवा में घुली हुई है। एक ऊँची इमारत की पिछली दीवार इस मैदान की ओर पड़ती है। इस दीवार पर एक विशाल रंगीन शानदार होर्डिंग लटका है। इस पर स्थानीय विधायक और नगरपालिका अध्यक्ष के मुस्कुराते फोटो हैं। एक-एक करके सात कवियों एवं दो कवयित्रियों के चेहरे हैं। संचालन करने वाले कवि कुमार प्रमोद को संचालन की मुद्रा में चित्रित किया गया है। कहते हैं कि आजकल इस कवि का रेट सबसे ज्यादा है। यह लोगों को खूब हँसाता है। एक रात के एक लाख लेता है। उसके पास अपने बंदूकधारी सुरक्षा गार्ड हैं। उसने अपने जूते उठाने तक के लिए एक आदमी रख छोड़ा है।

पहले सुखदेव को भी कविता सुनने-पढ़ने में बहुत रुचि थी। लेकिन अब वे कविता से बहुत जल्दी ऊब जाते हैं। मंच की कविता उन्हें फूहड़ लगने लगी है। एक ही कविता को अनेक बार सुनना उनके लिए असहनीय हो जाता है। अब वे कवि सम्मेलन सुनने नहीं जाते हैं। दूसरी ओर छपने वाली कविता उनकी समझ से बाहर, अमूर्त और भारी होती जा रही थी। उनका एक दोस्त सूरज अच्छी कविता लिखता है। उसने अपने पैसे लगाकर एक संग्रह भी छपवाया। लेकिन उसकी किताब को कोई खरीदता ही नहीं। अच्छी कविता का न पढ़ा जाना उन्हें खतरनाक लगता है। उन्हें नगर के एक दूसरे कवि अर्चन की भी याद आई जो खुद को जनकवि कहता है, लेकिन विधायक और सांसद के निकट अधिक रहता है। वह कवि की अपेक्षा पत्रकार अधिक है - जन प्रतिनिधियों के हितों को साधकर उन्हें खुश रखने वाला। पिछले दिनों उसके काव्य संग्रह का विमोचन विधायक, सांसद और प्रभारी मंत्री ने किया था।

सड़क किनारे पानी का एक टैंकर खड़ा है। रात में इसका उपयोग हुआ होगा। बेलनाकार टैंकर पर हरे, केसरिया और सफेद रंग के पट्टे हैं। उस पर सुंदर अक्षरों में विधायक का नाम अंकित है। आगे की ओर लिखा है - जल ही जीवन है। लेकिन पाइप ठीक से बंद न होने से पानी की एक-दो पतली धारें बाहर निकल रही हैं। टैंकर लावारिस सा पड़ा है। इस पानी को व्यर्थ बहने से रोकने वाला वहाँ कोई नहीं था। संदेश के अनुसार पानी जीवन था और यहाँ जीवन लगातार रिस रहा था। और किसी को भी इसकी परवाह नहीं थी। सुना है टैंकर की खरीदी में खूब कमीशनबाजी होती है। खूब धांधली होती है। खूब पैसा बनाया जाता है। नाम और दाम दोनों मिलते हैं।

अब वे मेन रोड पर आ गए हैं। यानी असली नगरीय क्षेत्र में उनका प्रवेश हो गया है। सड़क किनारे जगह-जगह कचरे के ढेर हैं। सफाई कर्मचारी अपने काम में जुटे हैं। धूल के छोटे-छोटे गुबार यहाँ-वहाँ उड़ रहे हैं। कचरे के एक ढेर में तरबूज, खरबूज या डांगरी जैसे फल के छिलके फैंके हुए थे। एक मैला-कुचैला सा अधेड़ उन छिलकों से बचे हुए किसी और के जूठे हिस्सों को चुन-चुनकर तेजी से खा रहा था। आसपास कोई देख रहा है, इसकी उसे जरा भी शर्म नहीं थी। भूख ने उसकी शर्म को सोख लिया था। उसे देख उन्हें याद आया। डॉक्टर ने उन्हें मीठा खाने से मना किया है। पाँच फल-आम, केला, अंगूर, चीकू और सीताफल उन्हें नहीं खाना है। कैसी विडंबना है। जहाँ दाँत हैं, वहाँ चने नहीं और जहाँ चने हैं, वहाँ दाँत नहीं। वे उसे देखा-अनदेखा करके आगे बढ़ते जा रहे थे। उन्हें खुद उस आदमी को देखने में शर्म आ रही है। वे सायास प्रयत्न कर रहे हैं कि उधर न देखें। इससे उन्हें अपनी सकारात्मक ऊर्जा के क्षरित होने का भय लगने लगा।

आगे बालीपुर फाटे के बाद पुल पड़ता है। यह पुल एक नाले पर है। पंद्रह-सोलह साल का एक लड़का उनके आगे जा रहा है। शायद आसपास किसी के घर या होटल में नौकर है। उसके हाथ में एक लोहे की बाल्टी है। पूरी बाल्टी बासी और सूखी रोटियों से भरी है। उसने बाल्टी पुल के पूर्वी किनारे पर उड़ेली और पलट गया। बाल्टी नीचे उड़ेलते ही नीचे खलबली मच गई। रोटियों की लूट-मार मच गई। पुल के पूर्वी किनारे पर पॉलिथिन की फटी थैलियों, पन्नियों और कचरे के मिश्रण से बना एक छोटा-मोटा पहाड़ खड़ा था। जहाँ एक सात-आठ साल का लड़का अपनी मुंडी झुकाए एक मोटे काले सूअर और उसके पूरे कुनबे से रोटी के अपने हिस्से के लिए जूझ रहा था। वह एक हाथ से अपनी पॉलिथिन की थैली सँभाले सूअरों को खदेड़ने की कोशिश कर रहा था। ऊपर से देखने पर लगता था कि उसका सिर नहीं है, वह दो हाथों और दो टाँगों वाला सिर्फ एक धड़ है। वह अधिकाधिक रोटियाँ बटोर लेना चाहता था। दूसरी तरफ एक मोटा सूअर और उसका पूरा कुनबा अधिकाधिक रोटियाँ उदरस्थ करने की जी तोड़ कोशिश कर रहा था। सुखदेव का मन हुआ कि वह अपनी आँखें कसकर मींच ले। लेकिन आँखें मींचकर चलना मुमकिन नहीं था। अनायास यह दृश्य उसके सामने पड़ गया था।

इसी पुल से सटी बिल्डिंग की दीवार पर पतरे का एक साइन बोर्ड लगा था, जिस पर सुंदर रंगीन बड़े अक्षरों में लिखा था - अग्रवाल होटल - छोटे अक्षरों में नीचे कोष्ठक में लिखा था - शुद्ध शाकाहारी भोजन। अंत में होटल का पता लिखा गया था। क्या वह लड़का इस होटल में कभी भोजन कर पाएगा! वे सोचने लगे।

पुल के नीचे की एक अलग दुनिया थी। अँधेरा, सीलन भरी दीवारें, गंदा-सड़ता बदबूदार रुका हुआ पानी, पॉलिथिन की ढेरों वापरी हुई फटी थैलियाँ, अगड़म-बगड़म कचरा। अपना भोजन ढूँढ़ते, कचरे के ढेर को झिझोड़ते सूअर। यही सब था यहाँ। पुल के ऊपर थी एक दूसरी दुनिया। खुशहाल, कतारबद्ध चमकीली ऊँची इमारतें, साइनबोर्डों, लोकलुभावन विज्ञापनों से सजी-धजी, अगरबत्ती की खुश्बू से महकती रंगीन दुनिया। पुल के नीचे गंदा नाला बह रहा था। बल्कि यह कहना ठीक होगा कि बहने से अधिक रुक रहा था। बदबू फैला रहा था। सभी इमारतों के पिछवाड़े नाले में खुले थे। वे पूरी निर्लज्जता से अपना गंदा काला बदबूदार कचरा मिश्रित द्रव पाइप, गटरों के जरिए इसमें उड़ेल रहे थीं। इस पुल से गुजरते हुए उन्होंने दुर्गंध से बचने के लिए अपनी साँस रोक ली। लगता था मानो तमाम इमारतें एक-दूसरे से सटी ध्यानस्थ मुद्रा में शौच के लिए बैठी हों। एक दूसरे से असंपृक्त किंतु सटी हुई। उनके अगवाड़े साफ सड़क से जुड़े, भव्य और दिव्य थे।

तभी सामने से नगर के प्रसिद्ध परफेक्ट स्कूल की पीली बस निकली। सुबह-सुबह प्राइवेट स्कूल की बसें आसपास के गाँवों और नगर की गलियों, कॉलोनियों से बच्चों को बटोरने के लिए निकल पड़ती हैं। नगर ही नहीं गाँवों तक में कुकुरमुत्तों की तरह अनेक प्राइवेट स्कूलें उग आई हैं। ज्यादातर अँग्रेजी माध्यम से पढ़ाने का दावा करती हैं। सरकार ने भी सब बच्चों को पढ़ाने का अभियान सा चला रखा है। हर सरकारी स्कूल पर एक मोनो पेंट किया हुआ मिल जाता है, जिसमें एक पेंसिल के छोर पर एक लड़का और दूसरे छोर पर लड़की सवार दर्शाए गए हैं। यह सब सोचते हुए सुखदेव को सहसा सुअर से जूझता वह लड़का याद आ जाता है।

कुछ आगे बढ़े ही थे कि उनकी नजर उस आदमी पर पड़ी जो अक्सर इस कपड़े की दुकान के ओटले पर खुले में सोया या बैठा रहता। शायद उसके लिए अधिक चलना-फिरना मुश्किल था। उसके शरीर पर आधे-अधूरे, मैले-चीकट चीथड़े जैसे कपड़े थे। उसकी चादर भी करीब-करीब उसी तरह फटी पुरानी मैली-चीकट थी। लगता था वह महीनों से नहाया नहीं था। उसे देख उन्हें दुष्यंत कुमार का शेर याद आया - 'कल नुमाइश में मिला वो चीथड़े पहने हुए, मैंने पूछा नाम तो बोला कि हिंदुस्तान हूँ।' शायद उसके पाँव में कुछ तकलीफ होगी। उसने अपने पाँव का पूरा पंजा मैली चिंदियों से लपेट रखा था। आज वह ओटले के पास ही कचरे के ढेर में लगी आग से अपने शरीर को तपा रहा था।

सुखदेव चलते-चलते आखिर गांधी चौराहे तक पहुँच गए। यह नगर का खास चौराहा है, बस स्टेशन से सटा। यहाँ से चारों दिशाओं में चार रास्ते फटते हैं। यहाँ एक चबूतरे पर लोहे के मजबूत जंगले से घिरी गांधीजी की संगमरमर की प्रतिमा है। गांधीजी का मुँह दक्षिण की ओर है। उनकी आँखों पर गोल चश्मा लगा है। उन्होंने संगमरमर की चादर ओढ़ रखी है। गांधीजी के सिर के ऊपर एक चौकोर अँग्रेजी कवेलू की ढलवाँ छत भी बनी है। शायद अब गांधीजी को कुछ भी दिखता नहीं है। यदि उन्हें कुछ दिखता होता, तो वे उस चीथड़े पहने हुए हिंदुस्तानी आदमी को जरूर देख लेते। खुले में सोते उस मैले-कुचैले आदमी के लिए छत का इंतजाम जरूर कर देते। उसे अपनी चादर जरूर ओढ़ा आते। सुखदेव ने मन ही मन कल्पना की।

नगर में सर्वाधिक साइन बोर्ड, फ्लेक्स, पोस्टर और होर्डिंग आदि यहीं लगाए जाते हैं। आज किसी मंदिर में मूर्ति की प्राण प्रतिष्ठा हो रही है। सदर बाजार की ओर एक शानदार द्वार बना है और एक बड़े से होर्डिंग पर इस अवसर पर आयोजित विशाल भंडारे की सूचना लिखी है। आयोजकगण के नाम भी लिखे गए थे। भंडारे का ऐलान

भी पूरे नगर में किया जा रहा था। क्या इस भंडारे की खबर सूअर से रोटी के लिए जूझते उस लड़के तक नहीं पहुँची होगी! लेकिन एक-दो दिन के भोजन से उसकी समस्या हल होने वाली नहीं थी। पेट के खाड़े को भरना क्या इतना आसान है। इस होर्डिंग से भी बड़े एक होर्डिंग पर भागवत कथा के आयोजन की सूचना सुंदर, बड़े और रंगीन अक्षरों में थी। यह भागवत कथा एक प्रसिद्ध संत द्वारा कही जा रही थी। होर्डिंग पर कथा सुनाते संत का बड़ा-सा बोलता हुआ चित्र था। संत के हजारों भक्त थे। इस कथा का लाभ लेने की अपील भक्तों से की गई थी। चारों रास्तों पर भगवा तिकोनी झंडियों की जैसे बहार आई हुई थी। लेकिन भूखे पेट भजन न होय गोपाला। उन्हें फिर उस लड़के की याद आई। क्या इस कथा से उस लड़के को कोई लाभ होगा !

कुछ ही दूरी पर एक सूखा पेड़ खड़ा है। बेचारे की छाल तक उतर गई थी। यह पेड़ कभी हरा-भरा रहा होगा। इस पर कई पंछियों का बसेरा रहा होगा। उसने कितनी ही आक्सीजन मानव की साँसों को दी होगी। आज भी वह इस नगर के काम आ रहा है। उसके गले में सूर्या लॉज का इश्तहार टँगा था - रंगीन अक्षरों में लिखा था - सूर्या लॉज-ठहरने का उत्तम स्थान। इसके अलावा भी अनेक रंगीन इश्तहार उसके इर्द-गिर्द चिपकाए और लटकाए गए थे। ये रंगीन इश्तहार ऐसे लगते थे, मानो मुर्दे को नया कफन ओढ़ाया गया हो। बाईं ओर एक लोहे का पुराना बिजली का खंभा है। यह बीच में से झुका हुआ है और ऐसा लग रहा है जैसे किसी बूढ़े की कूबड़ निकल आई हो। खंभे को तारों ने थाम रखा था। तमाम सजी-धजी दुकानों और रंगीन बैनरों के बीच सूखा पेड़ और कुबड़ा खंभा मखमल में टाट के पैबंद से लग रहे थे। अवांछित।

थाने के पास धरने पर बैठे हड़ताली सरकारी शिक्षकों का टेंट लगा था। टेंट में कुछ शिक्षक सोए पड़े थे। कुछ उठ गए थे। माँगें न माने जाने के कारण उनकी हड़ताल अब आमरण अनशन में बदल गई थी। टेंट के आसपास और भीतर कई कार्डबोर्ड की कई तख्तियाँ रखी थीं जिन पर नील से कई नारे लिखे थे। जैसे - मान नहीं, सम्मान चाहिए, पूरा वेतनमान चाहिए, चाहे जो मजबूरी हो माँग हमारी पूरी हो, हम तीन लाख हमारे तीस लाख, बीमा है न पेंशन है, जिंदगी भर का टेंशन है आदि-इत्यादि। करीब एक महीने से यह सब चल रहा था। शिक्षक तरह-तरह से सरकार पर दबाव बनाने की कोशिश कर रहे थे। लेकिन सरकार उनकी सुन ही नहीं रही थी। बच्चों की पढ़ाई का नुकसान हो रहा था। सरकारी स्कूलों में केवल गरीबों के ही बच्चे तो पढ़ते हैं। शायद इसीलिए उनकी माँगों पर कोई ध्यान नहीं दिया जा रहा था। बेचारे गरीब बच्चों के गरीब शिक्षक !

तभी उन्हें एक साँड़ नजर आया। वह खरामा-खरामा सड़क पार कर रहा था। उन्होंने जीवन में कभी भी ऐसा पस्त और सुस्त साँड़ नहीं देखा था। वह बमुश्किल अपना एक-एक पाँव उठा पा रहा था। शायद उसे पूरी तरह निचोड़ा जा चुका था। अब वह लावारिस घूम रहा था।

आगे एक मोड़ है। सामने उन्हें एक इमारत की बिना पलस्तर की खुली ईंटों वाली दीवार पर बड़े सफेद अक्षरों में लिखा नजर आया - 'गुप्त रोगी मिलें-हर सोमवार-रजत वैद्यराज-अंबेडकर चैराहा।' प्रायः ऐसी इबारतों वाले पंपलेट वगैरह वे मूत्रालय की दीवार पर पाते हैं। इस दीवार को देख उन्हें लगा जैसे मूत्रालय की दीवार सहसा विराट होकर उनके सामने आ खड़ी हो गई हो। पास में ही श्रीकृष्ण टॉकिज में लगी ताजा फिल्म का पोस्टर चिपका था। पोस्टर में एक लड़की उत्तेजक मुद्रा में एक लड़के पर झुकी हुई थी। तभी उन्हें पता नहीं क्यों, उस मंत्री की याद हो आई जिसे अभी एक-दो दिन पहले ही महिलाओं और लड़कियों की एक सभा में दिए गए भाषण में कहे गए द्विअर्थी बोलों के कारण मंत्री पद से हाथ धोना पड़ा। साथ ही उन नाबालिग बच्चों की भी याद आई जो पाँच-दस रु. में अपने मोबाइल पर अश्लील फिल्में लोड करवाकर उन्हें दिन भर देखते फिरते हैं।

उन्हें चलते-चलते मालूम ही नहीं पड़ा कि अब वे कॉलोनी के गेट तक आ पहुँचे हैं। लेकिन यह क्या! सड़क के दाएँ किनारे पर एक बिल्ली मरी पड़ी है। कोई वाहन उसे प्रेस कर गया है। उसका मुँह चपटा होकर सड़क से चिपक गया है। उसके पेट की आँतें बाहर आ गई हैं। सड़क पर खून के धब्बे हैं। मृत बिल्ली के आसपास कौए मँडराने लगे हैं। एक बीभत्स दृश्य निर्मित हो गया है। वे फिर आँख मींचकर चलना चाहते हैं। लेकिन आँख मींचकर चलना मुश्किल होता है। उन्होंने बस, चाल बढ़ा ली। सड़क की बाईं ओर एक रंगीन बैनर लगा था। जिस पर लिखा था - 'यादगार होटल - यहाँ लजीज गोश्त मिलता है - नानवेज एंड वेज।' शायद बिल्ली उधर होटल में किसी हड्डी या मांस के टुकड़े के लालच में गई होगी और खुद मांस में बदल गई।

अब वे कहीं भी रुकना नहीं चाहते थे। बस जल्दी से जल्दी घर पहुँचना चाहते थे। घर में टेबल पर पड़ा अखबार उनकी प्रतीक्षा कर रहा था। लेकिन पहली ही खबर पढ़कर सन्न रह गए। उनके ही इलाके में पास के एक गाँव में पाँच साल की बच्ची के साथ रेप हुआ था। रेप करने वाला बीस साल का लड़का उसका ही नजदीकी रिश्तेदार था। रेप करने के बाद उसने बच्ची को मारकर खेत में फेंक दिया था। उन्होंने खिन्न हो

कर अखबार वापस रख दिया। उन्हें लगा कि अनजाने में उन्होंने किसी घिनौनी चीज को छू लिया हो।

नगर में ढेर सारे सूअर हैं जो दिन भर नगर में घूमते रहते हैं। सूअर पालक उन्हें नगर में खुला छोड़कर निश्चिंत हो जाते हैं और नगरवासी इनसे त्रस्त। घर के सामने ही कोने में एक सुअरनी ने बच्चे दिए थे। सुखदेव जी की नजर उधर गई। उन्होंने देखा एक भूखी हड़ियल सुअरनी आई। उसने झट से उनमें से एक बच्चे को मुँह से पकड़कर उठा लिया और रास्ते पर लाकर उसे कचड़-कचड़ खाने लगी। एक दूसरा छोटा सूअर भी उसका पीछा करने लगा। एक कौवा भी उसके पास उड़कर आ गया। वह भी मौका देखकर मांस की एकाध बोटी लेकर उड़ जाना चाहता था। दोनों उसके खाने में विघ्न डाल रहे थे। लेकिन वह सुअरनी बहुत भूखी थी। उसका खाली पेट रीढ़ से खाली थैली-सा लटक रहा था। वह दोनों के लिए कुछ भी छोड़ना नहीं चाहती थी। वह अधखाए सूअर के शिशु को मुँह से पकड़ और दूर ले गई। उसकी कचड़-कचड़ तेज हो गई। वह जल्दी से जल्दी अपने भोजन को निपटा लेना चाहती थी। छोटे सूअर और कौवे ने जब और उसका पीछा किया तो वह शिशु का बचा हुआ हिस्सा तीसरे स्थान पर ले गई। आखिर वह सुअरनी के पूरे जीवित बच्चे को खा ही गई। सुखदेव बस देखते ही रह गए।

डॉक्टर के अनुसार उनके नाश्ते का समय हो गया था। पत्नी उनके सामने नाश्ते की प्लेट रख गई। लेकिन नाश्ता करने की उनकी इच्छा ही मर गई थी। एक-एक करके सभी दृश्य उनके सामने से फिर गुजरने लगे। उन्हें ऐसी दुनिया में अपने होने पर घिन आने लगी।